'साठवें दशक की हिन्दी कविताओं में दलित'

डॉ.निकिता सावडिया

१. प्राक्कथन

यूँ तो यहाँ मैं अपनी रचना प्रक्रिया की बात करने जा रही हूँ मगर आप तो जानते ही है कि किसी भी तरह के सृजन की, जन्म मात्र की प्रक्रिया अंततः एक रहस्यपूर्ण प्रक्रिया है । विज्ञान ने सृष्टि के, प्रकृति के कई रहस्यों को उजागर कर दिया है फिर भी रचना का रहस्य अब भी रहस्य ही है, और मनुष्य के जन्म की प्रक्रिया स्त्री के उदर के बदले टेस्ट टयूब में हो तब भी रहस्य ही हैं । दलित साहित्य पर विचार करने के पूर्व दलित िकसे माना जाय इस संबंध में प्रमुख दो प्रकार के मत साहित्य में प्रवर्तमान हैं । प्रथम अर्थ संकुचित है और दूसरा अर्थ व्यापक हैं । संकुचित अर्थ धार्मिक ग्रंथ, सामाजिक व्यवस्था आदि के कारण हैं जिसके अंतर्गत चतुर्थवर्ण (शूद्र) में आनेवाली जातियों को आधार बनाया जाता हैं जबकि व्यापक अर्थ में ये उन सभी के लिए प्रयोग में लाया जाता है जिन्हें किसी न किसी प्रकार से दबाया गया हो फिर चाहे वह कोई भी जाति वर्ण या संप्रदाय के हो । इस संदर्भ में 'दलित' शब्द पर विचार करना मुझे आवश्यक लगता है । 'दलित' शब्द की अवधारणा के संबंध में साहित्यकारों व विद्वानों में मतभेद जरूर है पर इस शब्द पर कई विद्वानों ने अपने विचार प्रस्तुत किये है ।

२. 'दलित' शब्द 'अर्थ' एवम् परिभाषा

दलित शब्द के अर्थ और परिभाषा को एकाधिक परिप्रेक्ष्य में देखा जा रहा है ।

(१) डॉ.रामचन्द्र शर्मा के अनुसार - 'दलित शब्द मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रोंदा या कुचला हुआ, विनिष्ट किया गया है ।'[१]

(२) 'मैंने 'दलित जाति' उन लोगों को माना है, जिनके साथ शारीरिक स्पर्श होने के फलस्वरूप उच्च जातियों के हिन्दुओं को अपनी शुद्धि करना आवश्यक हो जाता है । इसका अर्थ यह नहीं है कि यह शब्द को किसी पेशे से सम्बद्ध कर दिया जाय, वरन् यह शब्द उन्हीं जातियों के लिए प्रयुक्त होगा जिनका उदाहरण के तौर पर हिन्दु समाज में अपनी परंपरागत स्थिति के कारण मन्दिर में प्रवेश निषेध हैं, या जिनके कुएँ अलग है, या जिन्हें पाठशालाओं में नहीं बैठने दिया जाता और बाहर ही रहना पडता है या जो इसी प्रकार की उच्च सामाजिक असमानताओं से पीडित हैं ।'[२]

माता प्रसादजी ने हिन्दू समाज व्यवस्था के अंतर्गत जिन्हें अस्पृश्य समझा जाता है और उसके साथ तिरस्कृत और अलगाव भरा व्यवहार किया जाता उन्हें दलित जाति के अंतर्गत रखा है । यहाँ माता प्रसादजी सामाजिक असमानता से पीडित वे जातियों को दलित मानते है जिसके साथ छूआछूत का व्यवहार किया जाता है ।

(३) डॉ.बाबासाहब भीमराव आम्बेडकर ने दलित की स्थिति को परिभक्ति करते हुए लिखा हैं - 'दलित जातियाँ वे है जिसे अपवित्र माना जाता है, इनमें निम्न श्रेणी के कारगीर, धोबी, मोची, भंगी, बसौट, सेवक जातियाँ जैसे चमार, डंगारी (मरे हुए पशु उठानेवाले), सउरी (प्रसूति गृहकार्य के लिए ढोल-डफली बजानेवाले), कुछ जातियाँ परंपरागत कार्य करने के अतिरिक्त कृषि-मजदूरी का कार्य करती है ।कुछ दिनो पूर्वतक उनकी स्थिति अर्द्धदास, बँधवा, मजदूर जैसी रही है ।'[३]

वास्तव में 'दलित' शब्द की व्याख्या आज भी सापेक्ष बनाने की कोशिष जारी है वरन् दलित वे है जिन्होंने अपने सम्मान के लिए विद्रोह किया संधर्ष करते-करते समानता के मूल्य को प्रस्थापित करने की कोशिश में रत है ।वहाँ यह भी देखा जा सकता है कि, सवर्णो ने सवर्ण हित को ध्यान में रखकर दलित का अर्थ

शोषित, पीडित और कुचला हुआ किया है। वह दलित के अंतर्गत उन सबको सम्मिलित करना चाहते है जो आर्थिक रूप से पिछडे है, शोषित है, पीडित है, किन्तु यह 'दलित जाति' की यह सारी अवधारणा नहीं है । दलित के अंतर्गत वे जातियाँ आती है जिन्हें परम्परा से अस्पृश्य समझा गया है । उन्हें सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शारीरिक और मानसिक सभी दृष्टियों से शोषण का शिकार बनाया गया है और सबसे रेखांकित करनेवाली बात यह है कि उन्हे अछूत समझा गया, सवर्ण उनकी छाया से भी कतराते रहे है । इसलिए अन्य जाति के लोग भले ही आर्थिक रूप से शोषित हो किन्तु वे अछूत नहीं है । उन्हें सामाजिक मान्यता प्राप्त है । वे गाँव कुशा बाहर नही थे, उनकि पवित्रता और सामाजिक ऊँचाई पर सन्देह नही रहा । अतः उन्हें भी यदि दलित के अंतर्गत रखा जायेगा तो उन जातियो को कौन सा नाम दिया जायेगा । जो सामाजिक वेदी पर उपेक्षित हैं । दलितो के उपर अस्पृश्यता का धब्बा लगा हुआ है और उसमें से मुक्ति के लिए 'हरिजन' या 'अछूत' की जगह अपने को 'दलित' कहना पसंद कहता है । एक सवर्ण आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए अपने आपको दलित कहते है । अतः यदि और विद्धानों ने जो दलित शब्द की व्याख्या व्यापक रूप से की है उन्हे उन जातियों को भी अछूत धोषित करना चाहिए । तब जा के 'दलित' शब्द की व्यापकता में रही असलीयत का पता चलेगा ।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि दलित शब्द के मूल रूप में हजारो सालो की भारतीय समाज की जाति व्यवस्था के शिकार वे लोग है जो अपने सम्मान के लिए अपने आप लडतरत है । मतलब असमानता में असामना को प्रस्थापित करने के लिए संधर्षरत है वह 'दलित' है ।

३. साठवें दशक की हिन्दी कविताओं में दलितगत चेतना

'दलित चेतना' और 'दलित साहित्य' सवर्ण मानसिकता और दलित विरोधी गतिविधियों के प्रतिरोध का साहित्य है । यह दलितों और चेतना से जुडे रचनाकारो का एक सर्जनात्मक प्रयास है ।'[४]

इस प्रकार समझा जा सकता है कि दलित काव्य लोगों में चेतना पेदा करनेवाला साहित्य है । अन्याय, अत्याचार और शोषण के विरोध में खडा होनेवाला काव्य है । पुराने गतिहीन मूल्यों को नकारता है । दलित-दमित वर्ग का पक्षधर यह काव्य सौन्दर्य के नये प्रतिमान बनाता है । वेदना, कोरी भावुकता और सुखे आशावाद का निरोध करता है । यह दलित मन की भावनाओं का, उसके सुख-दुःख का काव्य है । यह चेहराहीन, असंगठित को संगठित करके तेजोमय विश्व की और ममता से ले जानेवाला है । यह काव्य दलितो, पीडितो, शोषितों और श्रमिको के जवन में प्रकाश लाने के लिए प्रवृतिमय है ।

साठोत्तरी हिन्दी काव्य में दलित आन्दोलन के फलस्वरूप प्रस्फूटित दलित चेतना साठोत्तरी सभी कवियों की रचनाओं में व्यक्त हुई हैं । जहाँ यह दलित चेतना दलित कवियो में सहज थी वहाँ यह साहित्यकारों में सायास भी व्यक्त हुई है । साठोत्तरी हिन्दी कवियों में ओमप्रकाश वाल्मीमि, मोहनराय नेमिशराय, पुरूषोतक 'सत्यप्रेमी', डॉ.चकंवल भारती, सुदामा पाण्डेय 'धूमिल', रामकमल चौधरी, सैभिम मोहन आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

डॉ.सूखवीर सिंह की कविता 'बयान-बाहन' गाँव से अलग-अलग रहकर अलगाव के दुःखों को भोगते हुए दलित जनो की पीडा को इस प्रकार स्वर देती है -

'ओ ! मेरे गाँव ! तेरी जमीन पर
धुटी-धुटी साँसो के साथ
पलना पडता है अलग-अलग
लडखडाते कदमो से
चलना पडता है अलग-अलग
मरने के बाद भी
जलना पडता है अलग-अलग ।[५]

भारत में कुछ दलितो की स्थिति में आंशिक सुधार देखा जा सकता है किन्तु हजारो वर्षो से चली आ रही परंपरा इतने कम समय में पूरी तरह से कैसे बदल सकती है ? अतः आज भी परंपरागत शिक्षा से वंचित इस वर्ग के छात्रों के साथ विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में भी भेदभाव बढता जाता है । डॉ. दयानंद 'बटौही' की कविता 'द्रोणाचार्य सूने उनकी परंपराएँ सुने, इस संपूर्ण स्थिति का पर्दाफाश करती है कि अब कोई द्रोणाचार्य किसी एकलव्य से अँगूठा माँगने का तो साहस नही कर सकता हैं उसे प्रकटीकल में फैल अवश्य कर सकता है, यदि कक्षा में प्रथम स्थान हो, तो उसे छठ्े या सातवे स्थान पर खिसकाकर द्रोणाचार्य की परंपरा का निर्वाह कर देता है ।

'अब दान में अँगूठा माँगने का साहस कोई नहीं करता
प्रेकटीकल में फेल करता है
प्रथम अगर आता हूँ तो छाठा या सातवाँ स्थान देता है
जाति-गन्ध टाइटिल मे खोजते है
वह आत्मा को बेमेल करता है ।'[६]

ऐसी स्थिति में प्रेम, स्वंतत्रता, समानता, बन्धुत्व और न्याय को तरसता व्यक्ति विद्रोही हो जाए तो कोई आश्चर्य की बात न होनी चाहिए । क्यूंकि केवल एक वर्गविशेष में जन्म मात्र से कोई व्यक्ति इतना हेय हो जाए कि व्यक्ति की नजर में उसके प्रति धृणा, विद्वेष और अपमान के भाव ही तैरते नजर आये ।
'अधूरी चिट्ठी रोशनी की' डॉ.चन्द्रकुमार बरठे का कविता संग्रह दलित चेतना से परिपूर्ण है । इस संग्रह में उन्होंने अपने जीवन के संधर्षो को जो शताब्दियों से उनकी जाति के लोग अँधेरों के विरूद्ध करते आये हैं । व्यक्त किया है -

'सूरज का बेटा हूँ
मिट्टी का जाया
सदियों से
अँधेरे की तानाशाही के खिलाफ
लडता आया हूँ ।'[७]

दलित-चेतना में हिन्दु धर्म की धार्मिक भावना डरावनी और मानव विकास को अवरूधती हुई दिखाई देती है। यहाँ राक्षस नहीं देवताओं से डर लगता हैं । जितने हथियार देवताओं के चित्र में है इतने और किसी के पास नहीं है । 'डगाले' कविता में ओमप्रकाश वाल्मीकि कहते है -

'मेरी स्मृति में
राक्षस नहीं
डरावने देवता हैं
जो चैन से सोने नही देते मुझे ।'[८]

'हिन्दी की दलित कविता अपने दर्दभरे अतित के आज के समय व संदर्भ में रखकर विश्लेषित कर रही है, जो भविष्य की राह को प्रकाशमय बनाने का सफल प्रयास है ।'[९] अब दलित जनता और कवि डॉ.आम्बेडकर के बताये हुए मार्ग पर चलकर स्वतंत्रता, समानता, बन्धुत्व व न्याय के लिए पढने लगे है, संगठित होने लगे है और अपने अधिकारों के लिए संधर्ष भी करने लगे हैं ।

इस प्रकार साठोत्तरी हिन्दी कविता में दलित चेतना के विविध स्वर अभिव्यक्त हुए हैं । साथ ही कविता के इस आंदोलन ने दलित चेतना से दलित बुद्धिजीवियों के मन-मस्तिष्क को भी झंकझोरा हैं । दलित प्रतिबद्धता की यह कविता समाज परिवर्तन के मुख्य स्वर के साथ क्रांति का उद्‌धोष करती है और हिन्दी काव्यधारा में अपनी विशेष उपस्थिति दर्ज कराती हैं ।

४. साठवें दशक कि हिन्दी कविता में गैर दलित कवियों की दलित चेतनागत अभिव्यक्ति

हिन्दी साहित्य में दलित काव्य का वास्तविक आरंभ आधुनिक काल में नवशिक्षित दलितों द्वारा कविता के क्षेत्र में निर्णायक हस्तक्षेप करने से ही हुआ तथापि उसकी पृष्ठभुमि की रचना सिद्ध साहित्य, नाथ साहित्य, संत

साहित्य और आर्यसमाजी आन्दोलन के पश्चात् महात्मा गांधी के नेतृत्व मे चलाए अस्पृश्यता निवारण आन्दोलन आदि से प्रेरणा भी लेता है ।

गैरदलित कवियों में नाथूराम शंकर श्री रूपनारायण पाण्डे, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' आदि ने दलित चेतना को छूट-पूट रचना में अभिव्यक्ति दी है । यथा 'सनेही' जी की एक कविता -

'एक ही विधाता के अमृतपुत्र, एक देश
कुछ यों अपूत कुछ पूत कैसे हो गये ?
सबकी नशो में रक्त एक ही प्रवाहित है
कुछ देवदूत कुछ भूत कैसे हो गये ?.....'[१०]

राष्ट्रीय काव्यधारा की प्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान की एक कविता 'प्रभु तुम मेरे मन जानो' में एक अछूत बालिका के सहृदय पूजा-अर्चना की निशिद्ध कामना को अभिव्यक्ति दी गई है । आरसीप्रसाद सिंह उनकी एक कविता में अछूतों में आत्म-सम्मान की भावना करने के लिए कहते है -

'रे कौन तुम्हे कहता अछूत,
तुम तो गंगा की विमल धार ।'[११]

नागार्जुन की ख्यातनाम कविता 'हरिजन गाथा' दलित दहन की एक बीभत्स धटना को मार्मिक अभिव्यक्ति देते हुए एक नये दलित नायक के जन्म के पौराणिक आख्यान शैली में प्रस्तुत करती है -

'ऐसा तो कभी नही हुआ था कि
एक नही, दो नही, तीन नही
तेरह के तेहर अभागे
जिन्दा झोक दिये गये हो...... ।'[१२]

हालाकि कविता दलित नायक की एक अवतारी कल्पना के तानेवाने से बुनी गई है पर इसका मूल स्वर उसको एक दलित कविता करार देता हैं ।

धूमिल की 'मोचीराम' कविता भी अपनी बौद्धिक स्वर्णपंथी वाक्पटुता के बावजूद मूलतः जीवन और जगत को एक जूते गाठनेवाले दलित की दृष्टि से देखने का प्रयास मात्र है ।

'बाबुजी ! सच कहूँ मेरी निगाह में
न कोई छोटा,
न बडा है
मेरे लिए हर आदमी एक जोडी जूता है
जो मेरे सामने मरम्मत के लिए खडा है ।'[१३]

प्रगतिशील कवियों द्वारा रचित दलित वाक्य में सोमदत की कविता 'हरिजन हत्याकांड' एक विशेष कविता है । सैंकडों दुश्मनों से धिरे एक अकेले विद्रोही दलित नायक का बिम्ब यहाँ देखने ही बनता है -

'मल समेटनेवाले फावडे की धार पर
फिसलती किरणों की चकाचौंध
आँखों मे तेज से खौफ था
ठिठक गये एक के खिलाफ सैंकडों में एकत्र अपराधी
धक्क रह गये उनके जी..... ।'[१४]

५. समापन

निषकर्षतः कहा जाए तो दलित कविता के केवल एक मापदंड कि जन्म से दलित ही दलित साहित्यकार की श्रेणी में आते हैं । को न माना जाए और कुछ उदारमतवादी दलित साहित्यकारों की मान्यता को स्वीकारा

जाए तो हम महसूस कर सकते हैं कि हिन्दी काव्यधारा में बिन दलित कवियों का योगदान भी उपेक्षणीय तो नहीं है । दलित साहित्यकार या कवि बुमरंग से बाहर आकर देखा जाए तो कुछ संवेदनशील कवियों ने दलित चेतना को प्रामाणिकता से अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है यह निः संकोच कहा जा सकता है ।

संक्षेप में यह स्पष्ट होता है कि आज भी दलित कविता मूल आधार आम्बेडकरवादी विचारधारा और भारतीय इतिहास, धर्म, समाज और राजनीति में उसका प्रभाव है । फिर भी इसी भाव, अनुभूति से हिन्दी साहित्य के इतिहास में काव्यसर्जन हुआ है ।

दलित रचनाकारों के द्वारा काव्य रचनाएँ साठोत्तर समय से विपुल मात्रा में लिखी जा रही है और अस्सी के दशक के बाद हिन्दी साहित्य की हर एक विधा में दलित साहित्य लेखन होने लगा है ।

दलित कविता आज हिन्दी कविता में अपना एक अलग और विशेष स्थान बना चुकी है और अ बवह और किसी की भाषा की मोहताज नहीं है । आज दलित कविता का अपना सौंदर्यशास्त्र निर्माण हो चुका है ।

सन्दर्भसूचि

१.अंगूतर, दलित लेखक, (१९९४). साहित्य सम्मेलन, अंक-अक्टूबर/डिसेम्बर, (सं.) विमल कीर्ति, पृ.६४
कर्दभ, जयप्रकाश दलित साहित्य, (सं.) पृ.१०८ पर दी गई की कविता 'हरिजन हत्याकांड' का अंश ।
२.________. (२००१). दलित साहित्य (सं.) पृ.१०६-१०७ पर उद्धृत नागार्जुन की 'हरिजन गाथा' कविता का अंश ।
३.चौधरी, देवेश तीसरा पक्ष, (सं.) से ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता डगाले का अंश. पृ.२६ ।
पंडित, जगन्नाथ दलित साहित्य, अवधारणा और स्वरूप, पृ.१५ पर उद्धृत धूमिल की कविता का अंश ।
४.________. दलित साहित्य : अवधारणा और स्वरूप, पृ.२१ ।
५.प्रसाद, माता हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा, पृ.३ ।
६.बाबासाहब आम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय, भाग-१३, पृ.२४ ।
७.बरठे, चन्द्रकुमार अधूरी चिट्ठी रोशनी की, पृ.१४
८.वर्मा, रामचन्द्र संक्षिप्त शब्द सागर, पृ. ४६८ ।
९.शुक्ल, गयाप्रसाद दलित साहित्य, वार्षिक २००१, पृ.६२ 'स्नेही' की कविता से उद्धृत ।
१०.सिंह, सुखवीर दीर्धा, पृ.१३
११.सिंह, एन. दर्द के दस्तावेज, (सं.) पृ.१० पर बटोही की कविता का अंश ।
१२.सिंह, आ.सी. की कविता का अंश, पृ.२५